Q. भारतीय संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकार केवल नागरिक स्वतंत्रता के साधन नहीं हैं, बल्कि लोकतांत्रिक व्यवस्था की आत्मा भी हैं।
इस कथन के आलोक में मौलिक अधिकारों की प्रकृति, उद्देश्य एवं महत्व की विवेचना कीजिए। साथ ही यह भी स्पष्ट कीजिए कि मौलिक अधिकारों पर युक्तियुक्त प्रतिबंध क्यों आवश्यक माने गए हैं।

किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र की पहचान वहां के नागरिकों को प्राप्त अधिकारों से होती है। भारतीय संविधान का भाग-3 (अनुच्छेद 12 से 35) जिसे 'भारत का मैग्ना कार्टा' भी कहा जाता है, इसी पहचान को स्थापित करता है। मौलिक अधिकार वे मूलभूत मानवाधिकार हैं जो किसी व्यक्ति के भौतिक, बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए अपरिहार्य हैं।
डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने इन्हें संविधान का "सबसे आलोचित और महत्वपूर्ण भाग" माना था। प्रश्नगत कथन बिल्कुल सटीक है कि ये अधिकार केवल 'नागरिक स्वतंत्रता' के साधन मात्र नहीं हैं, बल्कि यह उस लोकतांत्रिक ढांचे की 'आत्मा' हैं जो विधि के शासन (Rule of Law) को सुनिश्चित करती है, न कि किसी व्यक्ति या सरकार की मनमानी को।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

मौलिक अधिकारों की अवधारणा रातों-रात उत्पन्न नहीं हुई। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ही भारतीय नेताओं ने यह अनुभव किया था कि औपनिवेशिक शासन में नागरिक स्वतंत्रताओं का किस प्रकार दमन होता है।

- **1928 की नेहरू रिपोर्ट** में पहली बार मूल अधिकारों की लिखित मांग की गई थी।
- **1931 के कराची अधिवेशन** में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने मौलिक अधिकारों का प्रस्ताव पारित किया, जिसकी रूपरेखा जवाहरलाल नेहरू ने तैयार की थी।
- संविधान सभा में **सरदार वल्लभभाई पटेल** की अध्यक्षता वाली परामर्शदात्री समिति ने वर्तमान स्वरूप को अंतिम रूप दिया, जो कि अमेरिकी संविधान (बिल ऑफ राइट्स) से प्रेरित है।

मौलिक अधिकारों की प्रकृति

भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकारों की प्रकृति को समझना आवश्यक है, क्योंकि यह न तो पूरी तरह से कठोर हैं और न ही पूरी तरह से लचीले। इनकी मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

1. **न्यायोचित :** यह इनकी सबसे प्रमुख विशेषता है। यदि राज्य या कोई अन्य संस्था इन अधिकारों का उल्लंघन करती है, तो नागरिक अनुच्छेद 32 के तहत सीधे सर्वोच्च न्यायालय या अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय जा सकता है। यह व्यवस्था इन्हें केवल 'कागजी वादे' से बदलकर 'वास्तविक शक्ति' बनाती है।
2. **नकारात्मक और सकारात्मक स्वरूप:**
    - कुछ अधिकार राज्य की शक्ति पर सीमा लगाते हैं (नकारात्मक प्रकृति), जैसे— "राज्य किसी व्यक्ति को कानून के समक्ष समता से वंचित *नहीं* करेगा" (अनुच्छेद 14)।

- कुछ अधिकार नागरिकों को विशेष सुविधाएं देते हैं (सकारात्मक प्रकृति), जैसे— धार्मिक स्वतंत्रता या शिक्षा का अधिकार।

3. **असीमित नहीं :** भारतीय संविधान निर्माताओं ने स्पष्ट किया कि कोई भी अधिकार निरपेक्ष (Absolute) नहीं हो सकता। राज्य इन पर 'युक्तियुक्त प्रतिबंध' (Reasonable Restrictions) लगा सकता है।
4. **प्रवर्तनीयता (Enforceability):** अधिकांश अधिकार स्वयं प्रवर्तनीय हैं, लेकिन कुछ को लागू करने के लिए संसद को कानून बनाने की आवश्यकता होती है (जैसे अनुच्छेद 17 के तहत अस्पृश्यता निवारण अधिनियम)।
5. **आपातकालीन प्रावधान:** राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352) के दौरान अनुच्छेद 20 और 21 को छोड़कर अन्य मौलिक अधिकारों को निलंबित किया जा सकता है।

मौलिक अधिकारों के उद्देश्य

संविधान के भाग-3 को शामिल करने के पीछे संविधान निर्माताओं के दूरगामी उद्देश्य थे:

- इनका मुख्य उद्देश्य एक ऐसी व्यवस्था बनाना था जहाँ सरकार कानूनों के अनुसार चले, न कि शासकों की इच्छा के अनुसार। यह अधिनायकवादी शासन को रोकता है।
- भारत जैसी विविधतापूर्ण संस्कृति में धार्मिक, भाषाई और सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों के वर्चस्व से बचाने के लिए ये अधिकार 'कवच' का कार्य करते हैं।
- अनुच्छेद 17 (अस्पृश्यता का अंत) और अनुच्छेद 18 (उपाधियों का अंत) का उद्देश्य सदियों से चली आ रही सामाजिक कुरीतियों को समाप्त कर एक समतामूलक समाज बनाना है।

मौलिक अधिकारों का महत्व

प्रश्न में उद्धृत कथन के आलोक में, मौलिक अधिकारों का महत्व केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह राष्ट्र के अस्तित्व से जुड़ा है:

1. व्यक्ति की गरिमा की रक्षा (अनुच्छेद 21 का विस्तार)

मेनका गांधी वाद (1978) के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि 'जीने के अधिकार' का अर्थ केवल पशुवत अस्तित्व नहीं है, बल्कि 'मानवीय गरिमा' के साथ जीना है। यह व्याख्या लोकतंत्र को मानवीय चेहरा प्रदान करती है।

2. विधि का शासन

मौलिक अधिकार यह सुनिश्चित करते हैं कि देश में 'कानून का राज' हो। चाहे प्रधानमंत्री हो या एक सामान्य नागरिक, कानून की नजर में सब बराबर हैं (अनुच्छेद 14)। इसके बिना लोकतंत्र अराजकता में बदल सकता है।

3. सरकार की निरंकुशता पर अंकुश

यह कार्यपालिका और विधायिका की शक्तियों को सीमित करते हैं। यदि संसद कोई ऐसा कानून बनाती है जो मौलिक अधिकारों का हनन करता है, तो न्यायपालिका उसे 'शून्य' घोषित कर सकती है (अनुच्छेद 13)। यह 'चेक एंड बैलेंस' की व्यवस्था लोकतंत्र को जीवित रखती है।

4. धर्मनिरपेक्षता का आधार

अनुच्छेद 25 से 28 भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र के रूप में स्थापित करते हैं, जहाँ राज्य का अपना कोई धर्म नहीं है और सभी को अपनी आस्था के पालन की स्वतंत्रता है। यह भारत की एकता के लिए अनिवार्य है।

युक्तियुक्त प्रतिबंध

अक्सर यह आलोचना की जाती है कि भारतीय संविधान एक हाथ से अधिकार देता है और दूसरे हाथ से वापस ले लेता है। किंतु, एक सभ्य समाज और संगठित राज्य के संचालन के लिए अधिकारों पर सीमाएं आवश्यक हैं।

प्रतिबंध क्यों आवश्यक हैं?

1. स्वतंत्रता का अर्थ मनमानी करना नहीं है। यदि सबको असीमित छूट दी जाए, तो समाज में जंगल राज की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी जहाँ केवल ताकतवर का ही अस्तित्व होगा।
2. भारत की एकता सर्वोपरि है। यदि कोई व्यक्ति 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' (अनुच्छेद 19) का प्रयोग देश के टुकड़े करने या अलगाववाद भड़काने के लिए करता है, तो उस पर रोक लगाना राष्ट्रधर्म है।
3. समाज में शांति बनाए रखने के लिए, दंगों को रोकने के लिए या यातायात सुचारू करने के लिए सभा करने या घूमने की आजादी पर रोक लगाई जा सकती है।
4. अश्लीलता या अनैतिक कृत्यों को 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' के नाम पर उचित नहीं ठहराया जा सकता।
5. कभी-कभी व्यक्तिगत हित और सामुदायिक हित में टकराव होता है। उदाहरण के लिए, किसी की जमीन का अधिग्रहण विकास कार्यों के लिए करना (कानूनी प्रक्रिया के तहत) व्यापक जनहित में आवश्यक हो सकता है।

'युक्तियुक्त' (Reasonable) शब्द का महत्व:

संविधान में केवल 'प्रतिबंध' नहीं, बल्कि 'युक्तियुक्त प्रतिबंध' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ है कि प्रतिबंध तार्किक होने चाहिए, मनमाने नहीं। न्यायपालिका यह तय करती है कि लगाया गया प्रतिबंध उचित है या नहीं।

निष्कर्ष

अत: यह कहा जा सकता है कि भारतीय संविधान में मौलिक अधिकार और उन पर लगाए गए प्रतिबंध परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे के पूरक हैं। मौलिक अधिकार जहां व्यक्ति को उसकी पूर्ण क्षमता

तक पहुंचने का अवसर देते हैं, वहीं प्रतिबंध उसे यह याद दिलाते हैं कि वह समाज का एक हिस्सा है और उसके समाज के प्रति कुछ दायित्व भी हैं।

जैसा कि न्यायमूर्ति पतंजलि शास्त्री ने ए.के. गोपालन मामले में कहा था— "सामाजिक नियंत्रण की अनुमति उतनी ही दी जानी चाहिए जितनी कि व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए आवश्यक है।"

अतः मौलिक अधिकार वास्तव में भारतीय लोकतंत्र की आधारशिला हैं, जो व्यक्ति और राज्य के बीच एक नाजुक लेकिन आवश्यक संतुलन बनाए रखते हैं।